भाग्यवान् (मराठी सामाजिक कहानी)

लेखिका - सौ. मीना गरीबे (जैन) अकोला.
हिन्दी रुपान्तरकार - जमनालाल जैन, सारनाथ (वाराणसी)

'सारांश यह है कि अच्छा-बुरा जो भी फल हमें भोगना पडता है, वह सब अपने ही शुभाशुभ कर्मों के कारण ।'

अन्तिम पंक्ति पढकर कुन्दाताई ने ग्रंथ के उस पृष्ठ पर कागज रखा और शास्त्र बांधकर रख दिया । जिनवाणी को तीन बार नमोऽस्तु बोलकर जिनवाणी की जय बोलकर जिनवाणी की स्तुति मधुर स्वर में गाने लगी-

हे जिनवाणी माता, मोहे पार लगा देना ।
इतनी सी विनय तुमसे, चरणों में जगा देना ।।

स्तुति बोलने के पश्चात् निर्मलाताई ने पुनः एकबार जिनवाणी को नमन किया । मंदिर में पाँव धोने के लिए लाया हुआ पानी का लोटा और अष्टद्रव्य की थाली उठाकर जल्दी जल्दी वे मन्दिर के बाहर आयी । नौ बज रहे थे । कुछ रसोई बनाना बाकी था । सबेरे के समय बहुत जल्दी रहती है, काम ज्यादा, समय कम । शिरीष को दस बजे तक भोजन करके बैंक जाना होता है । परन्तु निर्मलाताई से रोज का शास्त्र स्वाध्याय का मोह भी नही छूटता । अनेक वर्षों से उनका यह नित्य का नियम ही हो गया था । प्रतिदिन सबेरे अभिषेक आदि सम्पन्न होने पर आठ-दस बहनें बैठकर स्वाध्याय करती, चर्चा करती । शंका समाधान भी चलता । नई-नई बातें समझ में आती । निर्मलाताई की श्रद्धा थी कि दिन का प्रारंभ स्वाध्याय तथा जिन-दर्शन से होने से मन की शांति बनी रहती है । जिनवाणी के अमृत वचनों के मन पर अमिट संस्कार होते है और फिर ये ही मधुर संस्कार दिनभर मानसिक सन्तुलन बनाये रखने में सहायक होते हैं । क्रोध आदि के सायों में भी जिनवचनों के स्मरण से समता-परिणाम टिके रहते हैं । इस कारण थोडा समय अधिक लगने पर भी वे शास्त्र-स्वाध्याय सम्पन्न होने पर ही घर लौटती ।

मंदिर से निकलकर जल्दी जल्दी पाँव बढाकर घर जाते समय दिमाग में विचार का चक्कर घूमने लगता । अब कुछ ही दिनों की बात है- बस, शिरीष का विवाह हो जाय तो बहू आ जायेगी वह सब सम्हाल लेगी । फिर कोई चिन्ता नहीं रहेगी । तब हम आराम से पूजा-अर्चा, शास्त्र-स्वाध्याय करेंगे ।बडे-बूढों का इस तरह सोचना स्वाभाविक ही है ।

घर पहुँचते ही उन्होंने कुकर चढाया, आटा सांधा इतने में ही .... शिरीष बैंक जाने के लिए तैयार हो गया और रसोई घर में जाकर बोला, 'माँ, खाना तयार हो गया ।'

'हो ही गया है रे ! अपना पाटा और पानी लेकर बैठ ! इन घुटनों के दर्द के कारण उठना-बैठना भी कठिन हो रहा है ।'

'माँ, आज शाम को तू डाक्टर के यहाँ जाकर जाँच करा ले । ठीक है न !' शिरीष ने कहा ।

'अब डॉक्टर को दिखाने से भी क्या होने वाला है । अब तो तुम कोई अच्छी सी बहू घर में ला ! अब इस अवस्था में सारा बोझ मुझसे सहन नहीं होता । बस, तेरा विवाह हो जाय कि मैं आराम से भगवान-भजन के लिए मुक्त रहूँगी ।' निर्मलाताई ने हँसते-हँसते कहा ।

निर्मलाताई तथा गुणचन्द्रजी की बस् एक ही आकांक्षा और भावना थी कि शिरीष के हाथ पीले हो जायें । माँ बेटे की बात सुनकर गुणचन्द्र रसोई घर में आते हुए बोले, 'अरे, शिरीष क्या लडकी देखेगा ! तुम ही देखो न अपने पसंद की कोई लडकी । क्या उसकी पसंद की गयी लडकी तुम्हे पसंद आयेगी ? दिनभर तो बहू तुम्हारे पास ही रहेगी । और शिरीष, मेरी सुनो तो अभी तू तीन-चार वर्ष तक विवाह के बारे में सोच ही मत ! तेरा विवाह होने पर तो तेरी माँ प्रायः मंदिर में ही जाकर बैठी रहेगी । मैं एक बार कॉलेज से निवृत्त हो जाऊँ, तब हम दोनों मंदिर में जाकर रह सकेंगे । मुझे तो ऐसा ही लगता है ।'

शिरीष मन ही मन मुसकराते हुए माँ-बाप की बातें सुन रहा था । एक वर्ष पूर्व ही शिरीष को बैंक में ब्रैंच मैनेजर के रूप में नौकरी लगी थी । तब से दिनभर में एकाधबार तो विवाह की चर्चा हो ही जाती थी । यूं भी अनेक संबंध आ रहे थे । परन्तु गुणचन्द्र और निर्मलाताई के आदर्श के चौखट में कोई लडकी जम नहीं रही थी ! उधर शिरीष के सपने में कोई निराली ही राजकुमारी बसी थी, पर वह खुले तौर पर मन की बात बोल भी नहीं पा रहा था,- पता नहीं माता-पिता को कैसा लगे और खास बात तो यह कि उस स्वप्निल के मन की थाह शिरीष को नहीं लगी थी ।

गुणचन्द्र बोल ही रहे थे कि हमेशा की तरह हँसते हुए हवा के सुखद-शीतल झोंके की तरह स्वाती आ गयी और पूरे घर में प्रसन्नता फैल गयी । अपनी आदत के अनुसार कबना रूके बोलने लगी, 'अंहं ! बूआ, यह शिरीषदा क्या लडकी पसन्द करेगा ? इस बारे में उसे समझता ही क्या है ? इसे तो एक शर्ट का कपडा भी पसंद करना भी नहीं आता । उसके लिए लडकी मैं पसंद करूँगी, हाँ ।'

'स्वाती, यह लडकी-वडकी की बात बाद में । पहले तो तू झटपट पाटा और पानी रख । बैंक जाने का समय हो गया है ।' शिरीष ने विनोदी क्रोध में कहा ।

'अरे, सब्जी में छोंक तो लगा पहले !' निर्मलाताई ने कहा ।

स्वाती कमर पर हाथ रखकर खडी रही और उपरी क्रोध में शिरीष की ओर देखकर बोली, 'ऑफिस का समय किसका हुआ है ?'

'मेरा !'

'देर किसको हो रही है ?'

'मुझे !'

'तब तुम ही रखो पाटा-पानी । मुझसे क्यों कह रहे हो ?' स्वाति ने अकडते हुए कहा ।

'स्वाती, अब तो करो !'

'तो जरा प्रेम से कहो न !' स्वाती ने चुटकी ली ।

'प्रेम से ? ठीक, ठीक ! स्वाती देवी, इस पामर पर कृपा करो ! बस, मेरी थाली लगा दो, बडी कृपा होगी ।' शिरीष के इस नाटकीय व्यवहार से सभी जन हँसी-विनोद की लहर में डूब गये ।

'अब कितने सरल हो गये !' कहकर स्वाती ने पतीला गैस पर रखा । उसमें तेल डाला । तेल गरम होने तक शिरीष और गुणचन्द्र की थाली आदि तैयार की । चट से सब्जी में छोंक लगाई । भगवान के आगे की नैवेद्य की थाली लाई । रसोई में बनी सारी चीजों में से थोडी थोडी नैवेद्य की थाली में रखी । हाथ में पानी का कलशा लिया और देवगृह में जाकर बोलने लगी....

'भो स्वामी ! नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु !'

नैवेद्य रखकर लौटने पर उसने दोनों की थालियों में परोसा और पाँच मिनट में ही सब सामान जहाँ का तहाँ करके, समेट कर जिस तरह बादलों की तरह भीतर आयी थी, वैसे ही झंझावात की तरह 'बूआ, मैं जा रही हूँ ।' कहकर जाने लगी ।

'अरे स्वाती, अब यहीं हमारे साथ भोजन कर ले ।' निर्मलाताई ने कहा ।

'आज नहीं, कल आऊँगी भोजन करने । आज मुझे अपनी सहेली के यहाँ जाना है । कल तुम बहुत अच्छी भाकरी और भेलवाली दाल बनाना, बुआ ।' और स्वाती बाहर निकल गयी ।

जाती हुई स्वाती की ओर तीनों ही देखते रहे । आखिर खाना खाते-खाते निर्मलाताई से रहा नहीं गया । बोली, 'ऐसी ही कोई प्रेमल, चटपटी, धार्मिक बहू घर में आ जाय !'

सचमुच मेरे मन की ही बात कही तुमने !' गुणचन्द्र ने कहा।

शिरीष खाते-खाते उपर देखने लगा । अंतिम कौर मुँह में डाला और धीरे से कहा,

'माँ और पापा ! ऐसी की अपेक्षा यही लडकी मिल जाये तो मैं विवाह के लिये राजी हूँ । ठीक है न !' और तत्काल उठकर हाथ-मुँह धोने चला गया ।

उसके इस आकस्मिक बम धडाके से माँ-पिता दोनों के हाथ के ग्रास हाथ में ही रह गये । हर्षातिरेक के कारण शद्ब ही नहीं निकल रहे थे । सुखद आश्चर्य से वे एक-दूसरे को देखने लगे । वे समझ ही नहीं पा रहे थे कि हम अपने अन्तरंगमें जिसका जप कर रहे थे, उसका पता शिरीष को कैसे लग गया ?

'माँ, जा रहा हूँ ।' सुनकर दोनों ही सभान हो गये । एक-दूसरे के मन की बात जानने और समझने पर गुणचन्द्र गद्‌गद् हो गए । कहा, 'यह विचार, हम तीनों के ही मन में एकही समय कैसे उत्पन्न हुआ, निर्मला !

'अन्तरंग के तार मिलने पर जीवन संगीत के स्वरों में झंकृत होगा ही । क्यों नही ?' निर्मलाताई ने अपनी लहर में कहा ।

'आज कॉलेज से लौटने पर मैं सुधाकर के यहाँ जाऊँगा, कहूँगा कि तेरी यह हँसमुखी परी मेरी गोद में सौंप दे ।' गुणचन्द्र ने उत्साह में आकर कहा ।

गुणचन्द्र और निर्मलाताई अब आगे की योजना या कार्यक्रम बनाने में रम गये ! सही बात तो यह है कि अब तक हरएक ने अपने-अपने सुख-स्वप्नों के केन्द्र में स्वाती को ही माना था । तानों की आशा का जाल उसीके चारों ओर बुना जा रहा था । निर्मलाताई को बहू के रूप में स्वाति ही दिखाई देती थी । अपनी कल्पना के चष्मे से उसने शिरीष और स्वाती का ही दाम्पत्य निहारा था । गुणचन्द्र को भी स्वाती के रूप में कन्या का अभाव दूर होने जैसा लग रहा था । 'दादा', 'दादा' करके चारो ओर फेरी लगानेवाली, पढाईविषयक कठिनाईयाँ पूछने वाली ।

और शिरीष ने तो अपनी उम्र में आने के बाद स्वाती के अतिरिक्त अन्य किसी के बारे में कभी सोचा ही नहीं था । उसकी तरूणाई के स्वप्न स्वाति के रूप में ही मानों साकार हो रहे थे मानो सभी आशा-आकांक्षा स्वाती के रूप में ही प्रकट हो रही थी । पर एक-दूसरे के मन की थाह न लगने से प्रत्येक ने यह मधुर गोपनीयता अपने-अपने अंतःकरण में सुरक्षित रखी थी । परन्तु आज अचानक ही सबके मन की गुप्तता ओठों पर आ गयी !

पूरा दिन इसी उत्साह में आगे का कार्यक्रम आदि बनाने में बीत रहा था । निर्मलाताई आतुरता से गुणचन्द्र के आने की राह देख रही थी । शाम को सुधाकर के यहाँ जाने का तय किया था, इसीलिए ।

स्वाती सुधाकर की यानी निर्मलाताई के भाई की कन्या । पन्द्रह मिनिट के रास्ते पर निर्मलाबाई का मायका । स्वाती और शिरीष दोनों बराबरी के । खेलने / झगडने में कब बडे हो गये, पता ही नहीं चला । दिनभर में कम से कम एकबार तो स्वाती का बुआ के यहाँ चक्कर लग ही जाता । अपनी अखंड वाचालता से वह निर्मलाताई के घर को गुलजार कर देती अपने मुक्त हास्य और बोली से और नटखट बर्ताव से सामनेवाले को अपना बना लेती । कभी एकाध दिन न आने पर निर्मलाताई को अच्छा नहीं लगता था । अपने रौबीले और तेजस्वी बेटे के लिए यह सुन्दर, स्मार्ट लडकी कितनी शोभास्पद, आकर्षक रहेगी, यह सोचकर वे अपने से ही हँसने लगी ।

शाम को गुणचन्द्र और शिरीष घर लौटे । हँसते-बतियाते भोजन से निपटे । सामान ठीक-ठिकाने रखा और निर्मलाताई ने सांध्यकालीन दीपक लाकर देवप्रतिमा के पास रखा । आरती की । बाद में निर्मला बहन और गुणचन्द्र सुधाकर के यहाँ जाने को निकले।

'शिरीष, हम मामा के यहाँ जा रहे है '

'माँ, मामा से कहना कि पहले स्वाती से पूछकर उसका विचार जान लें । Please !'

गुणचन्द्र ने हँसते हुए कहा, 'ठीक है, ठीक है !'

स्वाती की भावनाएँ समझने का शिरीष का प्रयास प्रेमल माता-पिता को सुखद लगा । दोनों बाहर निकल ही रहे थे कि सुधाकर

स्वयं ही हँसते हुए घर में आये । हाथ में पेडो का डिब्बा और चेहरे पर खिलती हँसी । सुधाकर कोई खुशखबर देनेवाले हैं, यह उनकी हँसी ही बोल गयी ।

'लीजिये गुणचन्द्रजी पेडे !, स्वाती का विवाह तय हो गया है ।'

सुधाकर के इस वाक्य का अर्थबोध तत्काल किसीको नहीं हुआ । गुणचन्द्रजी ने हाथ आगे बढाकर संकेत में पूछा।

सुधाकर उत्साहपूर्वक बता रहे थे, 'सुनो बहन, एकाएक घर बैठे संबंध आया । लडका इंजीनियर है । पिताजी की फैक्टरी है । बिलकुल नजर लगने जैसा स्थल है । लडका तो जैसे देखते ही रहो! और बडी बात यह कि स्वाती को भी पसंद है । पन्द्रह दिन बाद का मुहूर्त निकाला है । सचमुच स्वाती का भाग्य तेज है ।'

तीनों ही जैसे स्तब्ध, भौंचक रह गये ! निर्मला बहन तो नीचे ही बैठ गयी ! गुणचन्द्र क्या बोलें ! इतने में शिरीष ने तुरन्त अपने को सम्हाल लिया, 'मामा, सबेरे तो स्वाती ने कुछ बताया नहीं। जो हुआ, वह बहुत अच्छा हुआ । अब तो तैयारी में लगना होगा न !' शिरीष दिखावटी उत्साह से बोल रहा था ।

'अरे, हाँ ! लडकी अपने बारे में बोलने में लजा गयी होगी। और तू कम-से-कम आठ दिन की छुट्‌टी ले ले । मैं अकेला कहाँ तक भाग दौड करूँगा ! और वरपक्ष ऊँचा है । सब जहाँ का तहाँ व्यवस्थित हो जाय, बस !'

सुधाकर उत्साह के साथ आगे की व्यवस्था के बारे में बताते रहे । खरिदी कहाँ करनी है, हलवाई कौन रहेगा आदि । सुधाकर इतने उत्साहित थे कि गुणचन्द्र व निर्मला बहन उनके उत्साह की सराहना नही कर रहे हैं, यह उनके ध्यान में ही नहीं आया । सच है, हम यदि आनंद में है तो सारा विश्व आनन्दमय प्रतीत होता है ! यह स्वाभाविक है । उन्हे तीनों के मनःस्थिती की बिलकुल ही भनक नही हुई । सुधाकर जिस उत्साह से आये थे, उसी उत्साह में लौट गये ।

सुधाकर के जाने के पश्चात् निर्मलाताई रूलाई को रोक ही नही पा रही थी । वास्तव में तो सबके गले रूंध गये थे । कोई किसी से बोल नहीं रहा था । जैसे रेल्वे के वेटिंग रूम में अपरिचित प्रवासी एक छत के नीचे एक दूसरे से बिना बोले-बतियाये चुपचाप बैठे रहते हैं, वैसे ही ये परस्पर सुख-दुःख के साथी अपनी अपनी भावनाओं को सहल रहे थे ।सभी इस अनपेक्षित घटना के आघात से सम्हलने का प्रयास कर रहे थे । आखिर शिरीष ने ही नीरवता भंग की ।

'माँ, पापा ! आज का दिन हम अपनी आयु में से कम कर दें तो ! आज ही स्वाती के विषय में हम सब की अमूर्त भावना साकार हो गयी और आज ही वह परायी हो गयी । आज हमें एक दूसरे की भावना का पता चल गया । अन्यथा हम तीनों ही इस वेदना की घूँट अपने अंतरंग में समा लेते । अब भी दुःख तो है, पर मेरा दुःख आपके मनोरथ के भंग होने का है और आपको जो दुःख है वह मेरे सपने के विलीन होने का है । स्वाती के न मिलने का दुःख उस दृष्टि से कम है । हम लागों ने आज ही ये सपने संजोये और ध्वस्त हो गये । इसलिए कहता हूँ कि हम आज के दिन को जीवन में से कम कर दें, क्यों ?'

माँ, देखो, स्वाती कितनी भाग्यवान् है ! मेरी अपेक्षा अति सुन्दर वर मिला उसे और उसे भी वह पसन्द है । अच्छा हुआ इस एकपक्षीय प्रेम के जमने या अंकुरित होने के पूर्व ही छँटाई हो गयी । प्रीति के जो कोमल अंकुर मेरे हृदय में फूटे थे, उसका कोई लवलेश भी स्वाति के हृदय में नहीं था । नहीं तो वह दूसरे से विवाह करने की स्वीकृति ही नहीं देती । और हमारी ओर से सम्बन्ध तय करने की माँग उठती और वह इनकार कर देती तो ..... क्या हम दुःखी और अपमानित अनुभव नहीं करते ? अच्छा ही हुआ कि अब हमें अपना सोचने और करने का अवसर मिला है ।

माता-पिता शिरीष के उध्वस्त भावजगत् की कल्पना कर सकते थे ।

स्वाती के विवाह की तैयारियाँ शुरू हो गयी । सुधाकर प्रत्येक निर्णय के लिए शिरीष की राय लेते थे । कतिपय जवाबदारियाँ उसे सौंपी जा रही थी । शिरीष भी अपनी भावुक भावनाओं को छिपाकर या दबाकर यथाशक्ति मदद कर रहा था । अब शिरीष के माता-पिता भी कुछ सम्हल गये थे । स्वाती के आनन्द का तो कहना ही क्या ! उसके तो पेर ही धरती पर नहीं पड रहे थे । सपनों के मोहक सागर में लहराते उसके दिन-रात नया रूप ले रहे थे ।

विवाह के अब दो ही दिन बाकी थे । मेहमानों आदि से घर भर गया था । निर्मलाबहन भी इस मंगल प्रसंग पर मायके आ गयी थी । हँसी-मजाक, उत्साह, गीत-गान आदि का वातावरण था । स्वाति की सखियाँ स्वाति को मेहंदी रचाने में मजा ले रही थी । यही तो अवसर होता है, जब सखियों को चुहलबाजी करने, गुदगुदाने का मौका मिलता है ।

इतने में अचानक ही सुधाकरराव घर के भीतर आये । लगा कि वे क्षणमात्र में दस वर्ष से बूढे हो गये है ! क्योंकि घटना ही ऐसी थी । उनके गमगीन, गंभीर चेहरे से झलक रहा था कि हो न हो, कोई अनहोनी बात हो गयी है । उनकी पत्नी सुधा ने धैर्यधरकर पूछा, 'क्या बात है ? क्या हुआ है ?'

सुधाकर एकदम शिथिल से हो उठे । आँखे आँसुओं से भर गयी । अस्पष्ट और घबराये शद्वों से उन्होंने कहा, 'स्वाती का नसीब फूट गया सुधा ! क्या था और क्या हो गया !'

सारा हास्य, विनोद, उत्साह ठंडा पड गया । सब जने सुधाकर के आगे पीछे जमा हो गये । सागर के पिता यानी स्वाती के श्वसुर का फोन था कि, सागर की कार दुर्घटनाग्रस्त हो गयी, वह बेहोशी की हालत में अस्पताल में है । दुर्घटना इतनी जबरदस्त थी कि सागर का एक पैर टखनों के पास से बेकार हो गया है । फोन पर ही सागर के पिता ने सुधाकरराव को अपने वचन से मुक्त कर दिया और स्वाती का विवाह किसी दूसरे से करने की अनुमती दे दी ।

स्वाती इस दैवी आघात से बादल के फटने पर दरार पडने जैसी टूट गयी । उसका चेहरा देखा नहीं जा रहा था । वह रो भी नहीं सकती थी, और रोये भी किसलिये ? सागर के लिये ? अब तो वह उसका कोई नहीं था या फिर स्वयं अपने लिये ?

सुधाकर और सुधा तो मानो जीवन से ही हाथ धो बैठे । धीरे धीरे मेहमान आदि जाने लगे । निर्मलाताई भी जड अंतःकरण से मायके से जाने को हुई । सब लोग आये किसलिए थे और क्या हो गया या ! समय किसी के लिए ठहरता नहीं है । धीरे-धीरे सब अपने-अपने काम-धंधे से लग गये । केवल स्वाती ही थी जो सम्हल नहीं पायी थी । मानों प्राण ही निकल गये थे ! भाग्य की एक प्राणलेवा लीला ने उसे शद्ब-विहीन, अबोली बना डाला । पहले की हँसती-खिलती स्वाती अकाल मे ही प्रौढ हो गयी !

सुधाकरराव अब पुनः उसके विवाह के प्रयास में जुट गये । किन्तु अब स्वाती के माथे पर भाग्यहीन की मोहर लग गयी थी । अब विवाह करना इतना आसान तो नही था ।

एक दिन निर्मलाताई ने लडकियों के दो-चार फोटो शिरीष के आगे रखे । शिरीष ने फोटो एक ओर रखते हुए कहा, 'माँ, पापा! अब लडकियों के फोटो मत लाइये । आपकी अनुमति हो तो मैं स्वाती से ही विवाह करना चाहता हूँ ।'

'शिरीष ऐसा क्या, कुछ बोल रहा है ! स्वाती से विवाह तय होने पर सागर की क्या हालत हो गयी, देखा न ! लडकी का नसीब ही खराब है !'

'माँ ! स्वाती तुम्हारी भतिजी है, और ऐसा बोल रही है ?'

'पर इसमें झूठ क्या है ? उसके भाग्य में संसार-सुख होता तो ऐसी दुर्घटना क्यों होती ?'

'माँ ! स्वाती को अभागी (भाग्यहीन) क्यों कह रही हो ? अरे, इसके विपरीत वह कितनी भाग्यवान् है । जरा मेरी नजर से उसकी ओर देख ! उसके भाग्य में संसार-सुख है ही और वह भी शुद्ध ! उसके भाग्य में तो निरोगी और स्वस्थ पति का योग है ! नहीं तो यह दुर्घटना विवाह के पहले होने के बदले विवाह के पश्चात् नही हो सकती थी ? लेकिन स्वाति के नसीब में ऐसा लूला-लंगडा संसार है ही नहीं । और सागर तो अपनी गलती से ही पंगु बना है । इसमें स्वाती का क्या दोष है ? इसीलिए कहता हूँ कि तुम्हारी, मामा की और खासकर स्वाती की इच्छा हो तो स्वाती से ही विवाह करना है ।'

निर्मलाताई बेटे की ओर देखती रह गयी । सचमुच कितना समझदार है शिरीष ! हमें तो ऐसा विचार ही नहीं सूझा । शिरीष का कहना ठीक है । हमारे शास्त्र, हमारे सिद्धान्त यही तो कहते हैं । प्रत्येक जीव स्वतंत्र है । एक जीव दूसरे जीव का कुछ भी भला-बुरा नहीं कर सकता । एक के नसीब से दूसरे के जीवन में कुछ भी परिवर्तन नहीं हो सकता । तब फिर सागर की दुर्घटना के लिए स्वाती को कैसे जवाबदार माना जाय ? उसे भाग्यहीन क्यों समझा जाय ?

अब निर्मलाबहन को शास्त्र वचन याद आने लगे । सतत शास्त्राभ्यास होनो पर भी इस अंधश्रद्धा में कैसे फँस गये ! रटे हुए सारे तत्त्व, सिद्धान्त पुस्तक में ही रह गये और शिरीष ने केवल इन्हें अपने आचार-विचार से अपने जीवन में उतार लिया ।

'और हाँ, मुझे अत्यन्त धूम-धाम तथा आनंद-उत्सव से विवाह करना है । मेरा यह इकलौता लडका है शिरीष ! और स्वाती के लिए सब नये फैशन के महीन नक्काशी के गहने गढाने है ।' वे खुले मन से यह सब बोल रही थी और ऐसा बोलते वक्त भी वधुवेश में सजी-धजी लाडली स्वाती आँखों के आगे झलकती थी ।

गुणचन्द्र शिरीष की पीठ थपथपाते हुए बोले, 'I am proud of you my boy ! अब तुम सच ही प्रगल्भ हो गये हो शिरीष !आज ही जायेंगे सुधाकर के यहाँ । स्वाती के सम्बन्ध के लिए ।

शिरीष की आँखों में प्रसन्नता की चमक थी । समाधान के सहस्र कमल भी हँस रहे थे ।

स्वाती और शिरीष के वर-वधू के वेश में सजा हुआ जोडा द्वार पर खडा था । निर्मलाताई ने आरती उतारी । नीरांजन की तश्तरी से दोनों को आशीर्वाद दिये, अक्षत वारे ! स्वाति के गाल पर प्रेम से हाथ फेरते हुये कहा,

'आओ बहूरानी ! हम तुम्हारी ही बाट जोह रहे थे ।'

-0-0-0-0-0-

सौ. मीना गरीबे (जैन)
2, शिवनेरी सहनिवास,
विजय सोसायटी,
गोरक्षण रोड, अकोला (महा.)